॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे देव ! सखा ! हे मित्र ! तू इस संसाररूपी राष्ट्र का स्वामी है। इस राष्ट्र को शांतिदायक, महान और ऊँचा बना। विधाता ! यही नहीं हम संसार रूपी राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। हम सबसे पूर्व चाहते हैं कि यह हमारा हृदयरूपी राष्ट्र है यह हर प्रकार से ऊँचा बना रहे। यह हमारी हृदयरूपी जो अयोध्या है इसमें वह राम विराजमान रहे जिस रामराज्य के ऊपर संसार व्याकुल होता चला जा रहा है। हे विधाता ! आज हम शरीर को वह अयोध्या चाहते हैं जिसमें रामराज्य हो जाये। हमारी यह अयोध्यारूपी नगरी ऊँची बन जाये और वह विधाता इस नगरी में ओत-प्रोत हो जाये। वह विधाता इस राष्ट्र का स्वामी बन जाये।

हे विधाता ! आज हम उस राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। जिस राष्ट्र में हमारा जन्म हो जो राष्ट्र देखो, हमारे शरीर का एक ऊँचा भाग हो। कैसे बनायेंगे? जब तक आपकी करुणा नहीं होगी आपकी दी हुई प्रेरणा हमें नहीं मिलेगी। तब तक देखो हम इस संसार का अपने शरीररूपी राष्ट्र का उत्थान किसी भी प्रकार नहीं कर सकते न ही इसका निर्माण अच्छी प्रकार कर सकते हैं।

प्रभु ! हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते, संसार का कल्याण चाहते हैं। जब संसार में रहने वाले प्राणियों का हृदय अयोध्या के तुल्य बन जाये। रामराज्य सबके हृदय में रमण कर जाये। उस काल में मुनिवरो देखो, शान्ति का प्रदर्शन हो जायेगा।

विधाता ! आज हम भी अपना प्रदर्शन कर रहे हैं। हम भी अशान्ति में हैं। हमें शान्ति नहीं मिल रही है। परन्तु मनुष्य को अपनी मर्यादा कदापि भी शान्त नहीं करनी चाहिए। यह मर्यादा वह पदार्थ है जिसको त्यागने से यह संसार अशान्ति को प्राप्त हो जाता है। जब मर्यादा में चलता है तो उसे समय शान्ति को ग्रहण करने वाला बन जाता है। जैसे मुनिवरों, अग्नि मर्यादा में रहती है तब तक वह संसार के लिए लाभदायक होती है और जब मानव अग्नि को मर्यादा से पृथक् कर देता है तो उसी काल में वह संसार का विनाश करने वाली बन जाती है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 494 समग्र अंक : 569
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 48

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	पूजा के स्वरूप	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-18
4.	आत्मा परमात्मा का स्वरूप	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-29
5.	The State of the Soul after death	Pujyapad Gurudev	30-33
6.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना आदि		34-36

अथर्ववेद ब्रह्म-पारायण याग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी सद्प्रेरणा एवम् आशीर्वाद से वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी अथर्ववेद ब्रह्म-पारायण याग का आयोजन आर्य समाज मालवीय नगर, नई दिल्ली के प्रांगण में दिनांक 13 दिसम्बर 2013 से 15 दिसम्बर 2013 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित कर रही है जिसमें आप सभी अपने परिवार, सम्बन्धियों व मित्रों सहित आदर आमन्त्रित हैं।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

॥ ओ३म् ॥

पूजा के स्वरूप

जीते रहो,

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। इसलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहते हैं और उसकी आराधना में हम अपने को ले जाने का प्रयास करते रहे हैं। परम्परागतों से मानव के जीवन में नाना प्रकार की प्रतिभाओं का जन्म होता रहा है परन्तु एक अन्तरात्मा की ऐसी प्रेरणा है जब भी आत्मवेत्ता अपनी स्थलियों पर विद्यमान हुए हैं उन्होंने आत्म प्रेरणा को ले करके और उस महान् ज्ञान से प्रेरित हो करके उन्होंने मानो नाना प्रकार की पूजा में अपने को ले जाने का प्रयास किया है। सबसे प्रथम ऋषि मुनियों ने यह विचारा क्या यह पूजा क्या है। हमारे यहाँ वेदमन्त्रों में भी नाना प्रकार का विचार-विनिमय होता रहा है और उन वेदमन्त्रों में पूजा की बड़ी महान् एक पद्धति मानवीय जीवन के समक्ष आती रही है और जब मानव उसके ऊपर अन्वेषण करता रहा है और तपस्या में परणित रहा है तो वह पूजा के इस वास्तविक स्वरूप को जानने का उन्होंने प्रयास किया।

पूजा किसे कहते हैं?

एक समय बेटा ! मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि जालवी के यहाँ नाना जिज्ञासु ऋषिवर विद्यमान थे और उनके मध्य में एक ही प्रसंग था। एक वेद-मन्त्र उन्हें न्योदा में से स्मरण आ रहा था और वेद-मन्त्र कह रहा था पूजाम् भविप्रवाणं ब्रहे वृतम् देवत्वाऽहम् पित्रश्चम् ब्रह्माः पूजब्रह्मेः अग्नम् रथाः। तो वेद का मन्त्र यह कहता है क्या हम पूजन करना चाहते हैं। प्रत्येक मानव पूजा में रत्त रहता है। वह किसी न किसी स्वरूप में मानो पूजा करता रहता है। कोई पितृ पूजा कर रहा है। कोई मानो देखो न्योदा में पूजा कर रहा है। कोई नाना प्रकार के देवालयों में विराजमान हो करके अपने देव की आराधना अथवा उसकी पूजा करता रहा है। परन्तु पूजा करने के पश्चात् भी मानव के समीप एक प्रसंग बना रहता है कि पूजा हम किसे कहते हैं। वेद-मन्त्र यह प्रश्न करता है क्या पूजा किसे कहा जाता है? मानो एक वेद-मन्त्र बहुत पुरातन ऋषि-मुनियों को स्मरण आया जो बेटा ! देखो महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना वैज्ञानिकवेत्ता विद्यमान थे। जिसमें मुनिवरो देखो महर्षि प्रव्हाण और ब्रह्मचारी कवन्धी और शिलभ और पनपेतु इत्यादि ऋषि मुनियों का एक समूह विद्यमान था। यह अपने में जिज्ञासु भी थे और यह ब्रह्मवेत्ता भी थे और विज्ञानवेत्ता भी थे। तो मानो देखो विज्ञान और ब्रह्मवेत्ता एक दूसरे के पूरक कहलाए जाते हैं। तो इनमें नाना प्रकार का प्रसंग यह उत्पन्न हुआ क्या पूजाम भवि वर्णनम् ब्रव्हाः क्या वैज्ञानिक रूपों से हम पूजा किसे कहें? क्योंकि वास्तव में यह साधारण शब्द है। माता कहती है कि मैं अपने वर्णनम् मानो अपने उस देव की पूजा करना चाहती हूँ। पितर कहता है कि मैं पितरों की पूजा करना चाहता हूँ परन्तु शिववृत्तम कहते हैं क्या मैं शिव की पूजा करना चाहता हूँ। विष्णुवादी कहते हैं क्या मैं विष्णु की पूजा करना चाहता हूँ।

बेटा ! देखो एक समय मेरे प्यारे ! महानन्द जी ने नाना प्रकार के सम्प्रदायों की चर्चाएं कीं। उन्होंने कहा, सम्प्रदायों की चर्चा करते

हुए केवल यह कि एक दूसरा मानव एक-दूसरे की पूजा पद्धति में जाना चाहता है परन्तु वैज्ञानिकों का समूह जब विद्यमान होता है और दार्शनिकों के समक्ष यह विचारता है कि पूजा किसे कहते हैं? तो मेरे प्यारे ! देखो पूजा का एक ही स्वरूप बनता है—**किसी वस्तु का जैसी वह वस्तु है और जिस उपयोग में वह लानी है उस उपयोग करने का नाम उसकी पूजा कही जाती है।** जैसे एक मानव अग्नि की पूजा करना चाहता है तो अग्नि की पूजा का अभिप्राय यह कि अनुसन्धान करने वाला हो। अग्नि का वेद-मन्त्र कहता है देवाम् मुखाम् देवत्वाम् ब्रह्मा अग्नि। मानो यह जो अग्नि है यह अग्नि देवताओं का मुख है और देवता जन्म ब्रहे जब हुत करने वाला अग्नि के मुखारबिन्दु में जब मानो देखो नाना प्रकार का चरू या साकल्य उसमें प्रदान करता रहता है तो अग्नि उसे प्रसारण करके देवताओं का प्रदान कर देती है तो हे मानव देखो यह उसकी पूजा बनती है। पूजा का अभिप्राय यह कि अग्नि का उपयोग करना और देवताओं का मुख स्वीकार करके मानो देखो उसमें चरू प्रदान करना है। तो वही उसकी पूजा बनती है। पूजा का अभिप्राय यह कि अग्नि का सदुपयोग करना और देवताओं का मुख स्वीकार करके मानो उसमें चरू का प्रदान करना है। तो वही उसकी पूजा का अभिप्राय मानो अमृतम देखो देव पूजा बनती है।

आत्म-पूजन

मुनिवरो ! इसी प्रकार एक कथानक मुझे स्मरण आ रहा है। एक यागवेत्ता यह चाहता है कि मैं मानो एक विजय याग करना चाहता हूँ और मैं सँसार से विजय हो जाऊँ ऐसी मानो देखो उसकी भावना रहती है। यह दो प्रकार का मानो होता है। एक विजय वह बनता है **जो अपनी आत्मा के अनुकूल अपने जीवन को बनाने का प्रयास करता है और आत्मा से जो प्रेरणा प्राप्त होती है उसके अनुसार वह क्रियाकलाप करता है तो आत्म पूजन कहलाता है।** वह आत्मा का पूजन कर रहा है। जैसे गुरु और शिष्य दोनों एक दूसरे की

स्थलियों पर विद्यमान हो करके, विद्यमान हो करके शिष्यजन जब गुरु से अपनी जिज्ञासा प्रगट करते हैं और गुरु उसका यथोचित उसका उत्तर देता है तो उत्तर दे करके मानो देखो वह आचार्य के वाक्यों को स्वीकार करने वाला वह मानो देखो आचार्य की पूजा कर रहा है। तो पूजा का अर्थ ये कि एक मानव देखो उसका आत्मीय जो क्रियाकलाप है अथवा आत्मीय जो कर्म हैं उस क्रियाकलाप को, उस प्रेरणा को स्वीकार करते हुए हम अपने में पूजन करना चाहते हैं। तो वही वास्तव में उसकी पूजा कही जाती है।

माता की पूजा

जैसे माता अम्ब्रह्म ब्रहे वृतम् देवाम् हम माता की पूजा करना चाहते हैं। तो माता की पूजा का अभिप्राय क्या है? क्या हम माता की आज्ञा का पालन करने वाले बने, और **माता का पूजन यही है कि मानो देखो जो उसका यथोचित हम उसका आदरणीय स्वीकार करते उसका जो ऋण है उससे अवऋण होने का प्रयास करें** और माता मानो कहीं-कहीं पुत्र की भी ऋणी होती है। यदि माता अपने गर्भ से पुत्र को जन्म दे करके और यदि वह ऊर्ध्वा में नहीं बना सकती तो वह माता पुत्र की ऋणी कहलाती है। मानो देखो वह उपयोगाम् पूजाम् भूतम् ब्रह्मलोकाम् मानो देखो वह पूजा का रूप नहीं बन पाता। वह केवल एक अपवाद बन करके रहता है। तो विचार आता रहता है—वैदिक साहित्य यह कहता है क्या हम मानो देखो माता का पूजन करने वाले बने और पूजा का अभिप्राय यह है कि उसका यथोचित मानो हमें उसका स्वागत करना है। यथोचित मानो उसको स्वीकार करना है तो वह उसकी पूजा बनती है।

परमपिता परमात्मा की पूजा

मुनिवरो ! जैसे हम परमपिता परमात्मा की पूजा करना चाहते हैं। परमात्मा को अपना आराध्य स्वीकार करते हैं तो आचार्यों ने यह कहा है कि परमात्मा की जो सृष्टि है अथवा उसका जो यह ब्रह्माण्ड

है इस ब्रह्माण्ड के ऊपर यथोचित हम चिन्तन करें और उसको मानो चिन्तन के पश्चात् जो परिणाम हों उस परिणाम को हम स्वीकार करें और उसी परिणाम के अनुसार अपने जीवन को बनाएं तो मानो देखो वह उसकी पूजा बनती है। परमात्मा का पूजन करना हमारा सदैव कर्त्तव्य कहलाता है। **परमात्मा की पूजा का अभिप्रायः केवल यही है कि हम उसका जो बनाया हुआ यह ब्रह्माण्ड है अथवा एक-एक अणु है, एक-एक परमाणु है उसी परमाणु पर हमारा ध्यानावस्थित हो जाएं और अपने ज्ञान और विज्ञान के द्वारा मानो उसकी प्रतिभा को अपने में धारण करने वाले हों तो वह उसकी पूजा कहलाती है।**

विजय-याग

आओ मुनिवरो ! देखो मैं उच्चारण कर रहा था। मुनिवरो ! देखो हम एक राष्ट्रवेत्ता बन करके, मानो राजा बन करके हम अश्वमेध याग करना चाहते हैं और अश्वमेध क्या उसे विजय याग भी कहते हैं। मानो देखो दूसरा एक विजय याग कहा जाता है जिससे मानव दूसरों पर देखो विजय करने वाला बने। मैंने पूर्व काल में कहा है क्या एक तो विजय वह बनता है जो अपनी इन्द्रियों पर जितेन्द्रीय बन जाता है। इन्द्रियों पर संयम करता हुआ इन्द्रियों के साकल्य बनाता हुआ और वह हृदय रूपी यज्ञशाला में जब अपने में विजय याग करता है तो वह याज्ञिक बन करके मेरे पुत्रो ! वह अपने में सँसार को, अपने में विजेता को अपने में घोषित करता है। एक वह है जो बाह्य जगत में राजा देखो याग करता है और वह मानो देखो विजय याग करता है और विजय याग करता है वह मानो देखो अपने प्रेरणां भूतम अपने में संकल्प बनाता है।

मुझे स्मरण आता रहता है एक समय बेटा ! देखो समुद्र के तट पर विद्यमान हो करके मुनिवरो ! देखो भगवान् राम, लक्ष्मण और मुनिवरो ! देखो जामवन्त इत्यादि सभी देखो हनुमान, सुग्रीव इत्यादि

सब विराजमान हो करके और वह अपने में विचार विनिमय करने लगे। तो मेरे प्यारे ! देखो **महाराजा जामवन्त ने यह कहा क्या यदि तुम रावण को विजय करना चाहते हो तो मानो देखो तुम यहाँ देखो एक याग करो।** तुम रुद्र याग का पूजन करो और रुद्र याग से मानो तुम सफलता को प्राप्त हो जाओगे। वह शिव का पूजन करो। मेरे प्यारे ! देखो भगवान् राम ने कहा हे जामवन्त तुमने ऐसा क्यों कहा है? क्या मैं शिव की पूजा करूँ या मैं मानो देखो यहाँ रुद्र याग करूँ? उन्होंने कहा भगवन् रुद्र कहते हैं, रुद्र कहते हैं जो रुलाने वाला है। जैसे मानो देखो मानव के शरीर से जब यह प्राण चला जाता है तो इसके अंग-संग रहने वाले वह रूदन करते हैं। वह रुला देते हैं प्राणों के चले जाते ही इस शरीर में से। मानो देखो वह ऐसा रुद्र याग करो जिससे वह प्राण न जाएँ और हम मानो देखो उसमें रुद्रम ब्रहे हम रुदन न करें, हम सदैव देखो प्राणों का पूजन करते रहें। एक मानो देखो यह कि शिवम् ब्रह्मा। शिव कहते हैं परमपिता परमात्मा को जो मानो देखो शिवम् ब्रह्मा अश्व्रते जो सर्वत्र रचियता है। मानो इस सँसार को अनुशासन में लाने वाला है। हम उसकी आराधना करें और उसकी सृष्टि को निहारते हुए हम मानो याग में परणित हो जाएँ। एक वह याग कहा जाता है जैसे हम राजा को राजा से विजय करना चाहते हैं तो हम मानो जो शक्तिशाली राजा हैं। जैसे हमारे हिमालय का राजा शिव है, हम शिव की पूजा करें। **पूजा का अभिप्राय यह है कि हम उसको अपने अनुकूल बनाएं। हम उसकी आज्ञा का पालन करें और वह पालन करने का नाम ही उसकी पूजा है।** मानो देखो उसके अनुसार चलेंगे तो हमारी विजय होगी। मेरे प्यारे ! देखो भगवान् राम ने यह वाक्य जामवन्त का स्वीकार किया। स्वीकार करते हुए उन्होंने सुग्रीव जी से कहा कहो ब्रह्मणे ब्रह्मा व्रतम् देवाः क्या यह जो वाक् जामवन्त ने कहा है, यह यथार्थ है? उन्होंने कहा भगवन् बहुत प्रिय है। उन्होंने कहा तो सम्भव् ब्रह्मा लोकाम् क्या हम मानो देखो क्यों याग करें? तो उस समय देखो

वह महाराजा विभीषण ने कहा कि याग इसलिए सर्वश्रेष्ठ कहलाता है कि इससे मनोभावना मानव की पवित्र बनती हैं और पवित्र बनकर हम जिसको विजय करना चाहते हैं मानो अपने सुविचारों को हम न्याय और अन्याय को दोनों को एक स्थली में नियुक्त करते हुए और मानो हम दूसरों को नष्ट करना नहीं चाहते। क्योंकि वेद मन्त्र यह कहता है द्विष्टं ब्रव्हा क्रतम् देवत्वाम् देवो व्रहाः मानो जिसके प्रति हमारी, याज्ञिक पुरुषों की दुर्भावना हो जाती हैं मानो याग उसे भी वैसा ही दण्ड देता है जैसा कि देखो वह याग के जो शत्रु होते हैं उनको दिया जाता है। इस प्रकार की भावना तो हमारे अन्तर्हृदयों में नहीं होनी चाहिए परन्तु यह है कि जो हम उनके संग साथी हैं हम उनको प्रसन्न करें और प्रसन्न करके उनका उपयोग करें जिससे हमारा न्याय और देखो हमारा धर्म मानवीयता के आसन तक उसे हम रमण करने वाले हों।

मेरे प्यारे ! देखो मुझे ऐसा स्मरण है क्या राम ने उसी प्रकार जैसे देखो उन्होंने, सबने अपनी अनुमति दी तो उन्होंने हनुमान से कहा कहो हनुमान जी तुम्हारा क्या विचार है? तो महाराजा हनुमान क्योंकि वह सूर्य विद्या के मर्मज्ञ कहलाते थे। सूर्य विद्या को वह जानते थे। मुझे ऐसा स्मरण आता रहता है कि वह अपने कण्ठ में सूर्य विद्या को अपने में धारण करते रहे हैं और वह विद्याएं मानो देखो अपने में बड़ी विचित्रता में परणित रही हैं। तो मुनिवरो ! देखो वह अपने कण्ठ मुख से बोले कि प्रभु ! मैंने सूर्य सिद्धान्त को जाना है और सूर्य सिद्धान्त के ऊपर मेरा बड़ा अनुसन्धान होता रहा है और मैंने सूर्य विद्या के ऊपर नाना प्रकार के यन्त्रों का भी निर्माण किया है। मानो देखो एक मैंने **''पादुकाम''** नामक एक यन्त्र का मैंने निर्माण किया था और वह निर्माण भी महाराजा व्रेचि ऋषि के यहाँ विराजमान हो करके मानो मैंने उस विद्या का अध्ययन किया है। और उसमें मैंने यह जाना है कि उन आचार्यों की, महान् वैज्ञानिकों की कृपा से क्या मैं एक पादुका जानता हूँ। पादुका वृतिका

एक यन्त्र है जिसमें विराजमान हो करके जो यन्त्र सूर्य की किरणों के आश्रित हो करके गमन करता है और गमन करके मैं मानो यहाँ से उस पादुका यन्त्रों में विराजमान हो करके नाना लोकों में भ्रमण कर आता हूँ। तो मेरे प्यारे ! **देखो मैं समुद्र को जब लाँघने के लिए चला तो ब्रह्मणे तो मैंने उस यन्त्र का मैंने अपने में प्रयोग किया और यन्त्र में विद्यमान हो करके मैं मानो समुद्रों से पार हो जाता हूँ और द्वितीय राष्ट्रों में, लोकों में भी रमण कर जाता हूँ।** मानो सूर्य की जो ऊर्ज्वा है, वह ऊर्ज्वा के आश्रित हो करके मानो अपने में गमन करता रहा है। तो मेरे प्यारे ! देखो जब महाराजा हनुमान ने यह कहा कि मैंने सूर्य विद्या का अध्ययन किया है तो अध्ययन करने से उन्होंने एक वाक् और कहा कि मैंने सूर्य की किरणों में एक यन्त्र का मैंने अवधान किया है। जो यन्त्र मानो देखो इसमें अमृतम सूर्य की ऊर्ज्वा किरणों के साथ में मानो वह सूर्य की परिक्रमा कर रहा है और उसका जो आयु है यन्त्र का वह लगभग देखो एक लाख पांच सौ इक्कसठ वर्षों का आयु मैंने उसमें प्रदान कर दी है परमाणुओं के द्वारा, तो वह मानो सूर्य की परिक्रमा करता रहेगा। इतने समय तक परिक्रमा करेगा। मानो देखो जब एक समय उसके पश्चात फिर देखो समुद्रों से जलप्लावन आयेगा और जलप्लावन का मिलान मानो देखो जब चन्द्रमा से मिलान होगा समुद्र की तरँगों का तो वही मानो देखो उससे पूर्णमासी के दिवस एक मानो पूर्णेष्ठि में एक ग्रहण होगा। और ग्रहण का अभिप्राय यह कि देखो वह पृथ्वी की और सूर्य की छाया में जब यह चन्द्रमा आ जाएगा तो मानो देखो वह लाखों वर्ष उपरान्त यन्त्र की अपनी प्रतिभा नष्ट हो जाएगी। मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने इस प्रकार अपना मन्तव्य दिया। उन्होंने कहा प्रभु ! **अपना याग करना चाहिए परन्तु याग में विचार, याग में अपनी आत्मीयता का प्रायः दर्शन होना चाहिए और जब आत्मीयता का दर्शन होगा तो तुम्हारा याग सम्पन्न हो जाएगा।** मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। यह वाक् मुनिवरो ! देखो उन्होंने

स्वीकार कर लिया और स्वीकार करके मुनिवरो ! देखो याग का उन्होंने अपने में अवधान बनाया।

मुझे बेटा ! वह काल स्मरण आता रहता है। **उन्होंने बेटा ! देखो महर्षि मृचिका ऋषि और देखो साथ में वृत्तिका मुनि को और लोमश मुनि को उन्होंने निमन्त्रित किया। कागभुषण्ड जी को उन्होंने निमन्त्रित करते हुए** वह मुनिवरो ! देखो यज्ञशाला में विराजमान हो गये। मानो समुद्र के तट पर देखो उन्होंने कहा प्रभु! हम अजामेध याग करना चाहते हैं। हे प्रभु ! हम देखो विजय याग करना चाहते हैं जिससे रावण के दुष्कर्म नष्ट हो जाएँ और दुष्कर्म जब ही नष्ट होंगे जब उसका प्राणान्त होगा। भगवन् ! हम एक याग करना चाहते हैं, विजय याग। मेरे प्यारे देखो ! महर्षि कागभुषण्ड जी ने कहा क्या भगवन् अवश्य कीजिए क्योंकि यह तो तुम्हारा, याग तो तुम्हारा कर्त्तव्य है परन्तु देखो दुरभावना तुम्हारे अन्तःकरण में आयेगी तो यज्ञ का मानो उससे द्वितीय रूप बन जाएगा। मेरे प्यारे ! उन्होंने कहा कि उस दुष्भावना से नहीं हमारी इच्छा यह है कि सब जितना मानव समाज है, प्राणी मात्र है वह सब मानो एक ही सूत्र के मनके हैं और वह सूत्र में सूत्रित हो जाएँ जैसे नाना प्रकार के जो मनके हैं वह मनके एक ही सूत्र में पिरोने से माला बनते हैं। इसी प्रकार हम सब प्राणी क्या देखो प्रत्येक राष्ट्र एक सूत्र में सूत्रित होना चाहते हैं। हम उस सूत्र को धारण करते हुए सूत्र में सूत्रित हो करके अपने को पवित्र बनाना चाहते हैं। मेरे प्यारे ! राम के इन वचनों को पान करते हुए सब बड़े प्रसन्न हुए। **महर्षि लोमश मुनि महाराज ने यह कहा क्या हे राम यह समुद्र का तट है और समुद्र के तट पर यह विचार भावना तुम्हारी तरँगे मानो देखो तरंगित हो करके भ्रमण करेंगी।** अब यदि तुम्हें याग करना है तो रावण के जो आचार्य, गुरु रहे हैं वह महाराजा शिव रहे हैं और ब्रह्मा जी रहे हैं। उन दोनों को तुम्हें प्रसन्न करना होगा। जब तक उनको प्रसन्न नहीं करोगे जब तक तुम्हारा याग सम्पन्न नहीं होगा। तो मेरे प्यारे ! ऐसा स्मरण आ रहा

है क्या मुनिवरो देखो ! उन्होंने कहा बहुत प्रिय भगवन्, हम कैसे करें? हम उन्हें प्रसन्न कैसे कर सकते हैं? उन्होंने कहा तुम जा करके हिमालय के द्वार पर जाओ। देखो वह महाराजा शिव को अपने में देखो अपने आधीन, अपने में आधीन उनके आधीन स्वतः बन जाओ और उनसे नम्रता और बुद्धि युक्त, ज्ञानयुक्त हो करके तुम अपनी वार्ता को प्रगट करो। अपना जो देखो तुम्हारे मनो हृदयों में जो नाना प्रकार का वृत छाया हुआ है मानव समाज का वह उनके समीप नियुक्त करो। उन्होंने कहा बहुत प्रिय भगवन्।

मेरे प्यारे ! मुझे स्मरण आता रहा है महाराजा हनुमान ने कहा कि मैं और उनके देखो जो पुत्र हैं, हमनें, दोनों ने समुद्र के तट पर विज्ञान की देखो सम्पन्नता, शिक्षा पाने में विज्ञान में सम्पन्नता को हम प्राप्त हुए हैं। हमने नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया है और हम मानो देखो दोनों सहपाठी रहे हैं।

मुनिवरो ! देखो महाराजा हनुमान और देखो यह सर्वत्र एक समूह देखो वहाँ से समुद्र के तट से भ्रमण करता है और भ्रमण करते मुनिवरो ! देखो **अपने वाहनों में विद्यमान हो करके वह महाराजा शिव के द्वार पर पहुँचे।** जब शिव के द्वार पर पहुँचे तो मुनिवरो ! देखो वहाँ महाराजा शिव को सूचित किया गया क्या देखो भगवान् राम और देखो और भी देखो महर्षि लोमश और कागभुषण्ड जी और भी देखो नाना जैसे जामवन्त इत्यादि हनुमान जी सब मानो देखो तुम्हारे समीप आना चाहते हैं। उन्होंने आज्ञा दी क्या स्वतः अमृतम् ब्रव्हे मानो उनके लिए आसन लग गया और देखो महाराज शिव सर्वः विद्यमान हो गये और विद्यमान हो करके मुनिवरो ! देखो माता पार्वती भी विद्यमान हैं। तो उस समय महाराजा गणेश और कार्तिकेय भी विद्यमान हो गये। मेरे प्यारे ! देखो वह उनके वैज्ञानिकों की सभा में देखो क्रवेत्रर ऋषि और क्रवेत्रर मानो ब्रह्मवेत्ता अपने में वह उनके द्वारा नाना प्रकार के ब्रह्म में निष्ठ होने वाले विचारों को बनाते रहते थे। मानो वह भी विद्यमान हो गये और विद्यमान हो करके विचार-विनिमय होने लगा।

मेरे प्यारे ! देखो महाराजा शिव ने कहा कहो भगवन् अमृतम ब्रह्मे हे राम तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? उन्होंने कहा प्रभु हम इसलिए आप से कुछ प्रार्थी बन करके आये हैं। उन्होंने कहा क्या प्रार्थी है? उन्होंने कहा प्रभु हम समुद्र तट पर एक याग करना चाहते हैं और याग में आपको सम्मलित करना चाहते हैं जिससे भगवन् हमारा आत्मीय बल बलिष्ठ हो जाए और हम मानो देखो मृत्युञ्जय बन जाएँ और हम मानो देखो विजेता को प्राप्त हों। मेरे प्यारे ! देखो महाराजा शिव ने कहा तुम किसकी पूजा करना चाहते हो? उन्होंने कहा प्रभु हम पूजा करना चाहते हैं, **पूजा तो महानता की होती है।** मानो दूरिता की पूजा नहीं होती। पूजा केवल दूरिता को नष्ट करने के लिए और देखो मानवता को लाने के लिए देखो वह याग किए जाते हैं। हे प्रभु ! जिससे प्रदूषण समाप्त हो जाए और विचारों में महानता आ जाए। इस कारण देखो हम एक याग करना चाहते हैं और वह शिवम् ब्रह्मा पूजनम् ब्रहे हम मानो देखो उस परमात्मा की पूजा करना चाहते हैं जो हमारा सर्वत्र का पूजक है और जो सब ही को सुबुद्धि देने वाला है और सभी में मानो देखो विज्ञानयुक्त यह सँसार रचा है। जिसमें, इस सँसार में मानो देखो हम अपने में ही रत्त होना चाहते हैं। मेरे प्यारे ! महाराजा शिव ने कहा राम बहुत प्रियतम परन्तु देखो तुम याग तो करना चाहते हो याग तुम्हारा जब ही सम्पन्न होगा जबकि तुम्हारे विचार मानो देखो माला की भाँति होंगे। जैसे माला में मनके होते हैं और मनके सूत्र में पिरोये हुए होते हैं। **यदि तुम विजय याग करना चाहते हो तो सर्वत्र को एक माला के मनके स्वीकार करना होगा** और जो माला का मनका भ्रष्ट हो गया है, उस माला के मनके को मानो सूत्र में से समाप्त करने का प्रयास करना होगा, माला जब ही विशुद्ध बनती है। तो मेरे प्यारे ! देखो यह राम ने स्वीकार किया। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। तो मेरे प्यारे ! देखो महाराजा जामवन्त से कहा हे जामवन्त तुम्हारी आयु बड़ी प्रबल है और तुम वेद के मर्म को जानने वाले हो तुम मानो देखो अपने में वेदज्ञ कहलाते हो। तुम्हारा क्या इस सम्बन्ध में विचार है? महाराजा जामवन्त ने कहा प्रभु राष्ट्रीयता

तो उसी को कहते हैं जो राष्ट्रीयता तो देखो जो परमात्मा का नियम है। उस नियम को जो नियम से पथ-भ्रष्ट हो गया है उसको, पथ से प्रजा को लाने के लिए राष्ट्र का निर्माण होता है और यदि राजा बन करके प्रजा को मानो देखो उस पथ पर नहीं ला सकता, उस मानो देखो अपने में नहीं ला सकता वह राजा नहीं कहलाता। इसलिए मेरा विचार है कि देखो उस पथ पे लाने के लिए हमें वास्तव में अपने विचारों को महान बनाना होगा और वेदज्ञ बनना होगा, प्रकाश में लाना होगा।

मेरे पुत्रो ! देखो जब यह वाक् उन्होंने प्रगट किया तो वह अपने में बड़े प्रसन्नयुक्त हो गये और प्रसन्नयुक्त हो करके उन्होंने कहा, गणेश जी से कहा, कहो गणेश जी तुमने विज्ञान को बहुत जाना है। मेरे प्यारे ! गणेश जी उपस्थित हो करके बोले कि प्रभु मेरे सहपाठी हनुमान जी यहीं विद्यमान हैं। हम दोनों ने एक ही आचार्य से देखो ब्रह्म विद्या और देखो यह जो पदार्थ विद्या है इसको जाना है जिसे वैज्ञानिक विद्या कहा जाता है। हमने बहुत से यन्त्रों का निर्माण किया जो सूर्य की किरणों के साथ गमन करते हैं। कोई चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, कोई मंगल की परिक्रमा कर रहा है। परन्तु देखो हमने बहुत से यन्त्रों को जाना है और वह यन्त्रों को जानने का अभिप्राय ये कि **प्रभु का जो परमाणुवाद है, रचाया हुआ है, उस परमाणुवाद का उपयोग करना ही मानो देखो उसकी सृष्टि को निहारना है और सृष्टि को निहार करके विज्ञान का सदुपयोग करना, जिससे मानव कर्त्तव्यवादी बन जाए** और जब विज्ञान देखो अपने में वैज्ञानिक कर्त्तव्यहीनता में विज्ञान को ले आते हैं तो वह दुष्कर समय बन जाता है। वह दुष्कर्म है, देखो ब्रह्मवर्चोसी का विनाश करने वाला बनता है। तो मेरे विचार में तो यह कि इस प्रकार के क्रियाकलाप किए जाएं।

मेरे प्यारे ! देखो वह अपने में बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्न हो करके **महाराजा शिव ने आज्ञा दी जाओ तुम याग करो।** समुद्र के तट पर याग करो परन्तु हम तुम्हारे सहयोगी रहेंगे और मानो देखो

दुरिता को नष्ट करने का प्रयास करो। मेरे प्यारे ! देखो सब ऋषि-मुनियों ने एक ही अपने अन्तर्हृदय से उनकी प्रशंसा की और यह कहा कि प्रभु धन्य है आपका विज्ञान देखो बहुत अद्वितीय कहलाता है। महाराजा शिव के यहाँ ऐसे-ऐसे यन्त्र विद्यमान थे जो मारकण्डेय जी की सहायता से उन्होंने यन्त्रों को जाना। परन्तु देखो वह चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में उनके ऐसे-ऐसे स्थान थे जहाँ विद्यमान हो करके देखो वह चन्द्रमा की यात्रा और पृथ्वी की यात्रा और देखो बुध और शुक्र की यात्रा में वह सफलता को प्राप्त होते रहे हैं। इस प्रकार के यन्त्रों में विराजमान हो करके देखो वह एक ऐसा स्थान है, एक स्थली पर जहाँ देखो चन्द्रमा की भी सीमा अवृत होती है और बुध की भी होती है। मंगल की भी होती है और देखो वहीं शुक्र की होती है। वहाँ देखो यन्त्र में विद्यमान हो करके सर्वत्र लोकों में वैज्ञानिक भ्रमण करते रहे हैं। तो इस प्रकार मुनिवरो ! देखो मारकण्डेय ऋषि महाराज के अद्वितीय विचार विज्ञान में बड़े महानता में परणित होते रहे हैं जो महाराजा शिव के द्वारा मानो देखो अन्वेषण करते रहे। तो आज मैं बेटा ! उन ऋषि-मुनियों के विचारों में न जाता हुआ केवल यह क्या मुनिवरो ! **देखो महाराजा शिव ने कहा चलो समुद्र के तट पर याग करेंगे।** तो बेटा ! देखो मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि लोमश और कागभुषण्ड जी और भी नाना ऋषिवर बेटा ! देखो वह जामवन्त इत्यादि वहाँ से गमन करते हैं और महाराजा शिव से कहा क्या प्रभु आप उस याग का मानो देखो अद्वितीय शुभारम्भ करेंगे क्योंकि याग का प्रारम्भ तो आपके द्वारा होना है। मुनिवरो ! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। तो बेटा ! देखो वह वहाँ से भ्रमण करते हुए समुद्र के तट पर आ गए।

बेटा ! मुझे स्मरण है क्या उन्होंने बेटा ! देखो विजय याग को उन्होंने घोषित किया और विजय याग में उन्होंने कहा कौन ऐसा प्राणी है जो विजय याग करा सकता हो, जिससे हम विजयी हो जाएँ। मेरे प्यारे ! देखो **उन्होंने विद्वानों की, महापुरुषों की एक सूची**

बनाई परन्तु उसमें सबसे प्रथम महर्षि विभाण्डक मुनि को चुनौती प्रदान की, द्वितीय उन्होंने वशिष्ठ मुनि को चुनौती दी और तृतीय लोमश और मुनिवरो ! देखो वह और भी शृङ्गी इत्यादियों को उन्होंने निमन्त्रित किया और यह कहा कि याग को पूर्ण कराया जाए। तो मेरे प्यारे ! देखो मैं शेष चर्चा तो किसी काल में ही प्रगट करूँगा। परन्तु ये कि इन सब ऋषि-मुनियों ने विद्यमान हो करके उन्होंने बेटा ! देखो उस शिव याग का पूजन किया। और शिव याग उसे कहते हैं जिसे रुद्र शिवम् ब्रह्मा वरूण देवत्वाम्। **वैदिक साहित्य में बेटा ! शिव नाम के राजा भी हैं, शिव परमात्मा को भी कहते हैं, शिव नाम आत्मा का भी है परन्तु देखो शिव नाम प्राणों को कहा गया है जिससे हमारा प्राण न हनन हो जाए।** हम ऐसे मानो भावना से और ऐसे साकल्य के द्वारा देखो अग्नि में हुत करें। वो देवताओं का मुख है और देवताओं के मुख में जब हुत करेंगे तो वही मानो देखो देवता हमारे अन्तर्हृदयों में क्रियाकलाप कर रहे हैं, वही मानो देखो आत्मा का लोक बना हुआ है उसमें वह आत्मा का गृह है। आत्मा उसी पञ्च महाभूतों में क्रियाकलाप कर रहा है।

मेरे प्यारे ! मुझे स्मरण आता रहता है वहाँ मुनिवरो ! देखो यज्ञशाला का निर्माण किया गया। यज्ञशाला में देखो ब्रह्मा को निमन्त्रित किया। उस समय बेटा ! देखो हमारे यहाँ ब्रह्मा एक उपाधि से अलंकृत की हुई मानो देखो वृत्तियाँ मानी जाती हैं। उन्हीं उपाधियों से मुनिवरो ! देखो ब्रह्मा, देखो मन्त्रों के कथनानुसार आ करके उन्होंने बेटा ! देखो याग का अवधान किया और याग की रचना की। मेरे प्यारे ! देखो महाराजा शिव ने यह कहा क्या तुम एक याग ऐसा तुम कर गये हो और उसके पूर्व काल में जब तुमने रावण को देखो अपना ब्रह्मा नियुक्त किया है। उस याग को तुमने किया है। वह तुमने बहुत प्रिय किया परन्तु अब शिव याग कर रहे हो। तो मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने इस प्रकार का उद्धृत करके अपना वाक् प्रगट किया। तो मेरे प्यारे ! देखो याग सम्पन्न हुआ वह छः मानो देखो **तीन माह तीन दिवस**

तक याग प्रारम्भ रहा। बेटा ! याग में मानो विचार विनियम होता रहा, राजा महाराजा आते रहे। निमन्त्रित देखो ऋषि-मुनियों का आगमन होता रहा और उन्होंने बेटा ! देखो विजय याग किया। जिस विजय याग का परिणाम यह होता है कि हम अपने को विजय करें और जो हमारा शत्रु है, जो धर्म और मर्यादा का शत्रु है वह भी हमारा देखो वह उसके सुविचार बने और विचार नहीं बने तो हम उसको विजेता को प्राप्त हों। मानो इस प्रकार उन्होंने अपना अवधान बना करके मेरे प्यारे ! देखो समुद्र के तट पर एक याग किया था। **भगवान् राम ने दो याग किए थे समुद्र के तट पर।** एक याग में तो देखो रावण को निमन्त्रित किया था और द्वितीय याग में देखो उन्होंने ब्रह्मा इत्यादियों से विभाण्डक इत्यादियों से उन्होंने याग किया था। वह याग बेटा ! मुझे भी स्मरण आता रहा है। उस याग में मानो देखो समुद्राम् भूतम् ब्रह्मे व्रतम् देखो जलम् पूर्णम् ब्रव्हा कृतम्।

पूजा का वह वाक् चल रहा था। तो पूजा का अभिप्राय यह है क्या हम विजय करना चाहते हैं तो हम प्रत्येक राजा को अपने अनुकूल बनाएँ, वही उस राजाओं की पूजा है। समुद्र की पूजा करना चाहते हो तो समुद्र पे रमण करने वाले यन्त्रों का निर्माण करें और निर्माण करके मानो देखो उसी प्रकार जल तत्त्व को उसमें रत्त करते हुए मानो देखो गमन कर जाएँ, तो बेटा ! देखो वह जल की पूजा कही जाती है। अग्नि की पूजा का अभिप्राय यह कि अग्नि देवताओं का मुख है। अग्नि के मुख में नाना प्रकार का साकल्य प्रदान करो वह प्रसारण करके मुनिवरो ! देखो मानव को प्रदान करते रहेंगे। यह है बेटा ! आज का वाक्। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा ये क्या मुनिवरो ! देखो **याग करने से पूर्व हमारे विचार बनने चाहिए। हमारे विचारों में देखो मन मस्तिष्क, मन, मस्तिष्क और विचार एक ही धारा में परणित हो जाएंगे तो तुम्हारा याग सम्पन्न हो जाएगा।** यदि तुम्हारा मस्तिष्क कहीं रहेगा, मन कहीं रहेगा और विचार कहीं रहेगा तो तुम्हारे याग में सफलता इतनी नहीं आयेगी जितना तुम

सफलता को चाहते हो। मानो देखो याग की सफलता जब ही है जब याग में विद्यमान हो करके मन, मस्तिष्क और विचार एक ही तुल्यता में आना चाहे तो उससे आत्मा का जो सम्बन्ध है वह चेतना से रहता है और चेतना चेतना से सम्बन्ध हो करके और यह जो सँसार है यह जिन तत्त्वों से सँसार की रचना होती है वह रचना मानो देखो उसके अनुकूल बन जाती है। और हमारे शरीर में जो पंच महाभौतिक पंच मानो देवत्वाम् क्रियाकलाप कर रहे हैं जो देवता, जो देवता बन करके वास करें। जो आत्मा का जो लोक है वह मानो देखो उस पंच महावृतियों में रत्त रहने वाला है वह महानता को प्राप्त होता रहेगा।

यह है बेटा ! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट कर सकूँगा। आज का वाक क्या है। क्या हम बेटा ! देखो पूजा के सम्बन्ध में तो कल ही अपना विचार और विशेष दे सकेंगे। आज का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस सँसार सागर से पार होने का प्रयास करें जिससे बेटा ! **हमारा याग अपने में सम्पन्नता को प्राप्त हो। हम आध्यात्मिक और भौतिकवाद दोनों को ऊर्ध्वा में ले जाएँ।** परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए मानो उसकी सृष्टि को निहारते रहें। यह है बेटा ! आज का वाक् अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट कर सकूँगा।

ओ३म् देवाः आभ्याम् स्थम् माहम् प्राची रथम् आभ्याम् दधि वाचन्नमाः

ओ३म् देवाम् रथम् प्राची रेवम् ब्रह्म वायाहाम्

ओ३म् रथम् मन्था वाचन्नमाः ग्राह्मणत्वाः

अच्छा गुरुदेव !

दिनांक : 27 अगस्त, 1992

समय : रात्रि 8 बजे

स्थान : जयदेव पार्क, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

आत्मा परमात्मा का स्वरूप

अहा ! आज परमात्मा से निवेदन करें, परमात्मा से उच्चारण करें कि हे परमात्मन् ! आपके बनाये हुए संसार में आज प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या (नारी) दुःखित होती चली जा रही है, एक मानव दूसरे मानव पर घात लगाये बैठा है। परन्तु वेदवाणी तो कहती है कि परमात्मा ने संसार को उत्पन्न किया है। **वेदवाणी के उच्चारण से इस विशाल वायुमण्डल को शुद्ध किया जाये जिससे कि मानव के अन्तःकरण में शुद्ध भावनायें आयें।**

कुछ मानव कहते हैं और महानन्द जी का संकेत भी बारम्बार आता है कि आज का मानव अपने को परमात्मा का रूप मानता है।

परन्तु हे विधाता ! यदि आप ही यह आत्मा (जीव) हैं या यही (आत्मा ही) परमात्मा है तो आपके बनाए हुए संसार में (ये जीव) एक दूसरे के रक्त के अभिलाषी क्यों बन बैठे हैं? यह क्या ऐसा आपका बनाया हुआ ब्रह्माण्ड है, जिसमें मानव दुःखित होता चला जा रहा है? मानव में परस्पर (महती) शत्रुता क्यों है? इस प्रकार का यह संसार क्यों है? यह तो बड़ा विचारणीय प्रश्न है।

बेटा ! एक समय महर्षि अटुल मुनि महाराज, देवर्षि नारद सनतकुमार आदि आचार्य लोमश मुनि महाराज, विभाण्डक ऋषि महाराज, महर्षि पारा मुनि और उनके पुत्र धुन्धु ऋषि महाराज आप्त ऋषियों और महान् दार्शनिकों के समाज में विचार चल रहा था कि यह परमात्मा का बनाया हुआ संसार तो है, परन्तु यह इस प्रकार का क्यों है? इस प्रकार के संसार में परमात्मा का क्या महत्त्व है? हम परमात्मा को क्या मानें? स्वयं परमात्मा क्या पदार्थ है? यदि यह आत्मा ही परमात्मा है तो एक मानव दूसरे का शत्रु क्यों बना बैठा है? और कौन किसका

राजा बना बैठा है? कौन किसकी प्रजा बनी बैठी है? आज का मानव इस पर दार्शनिक दृष्टि से विचार करता है परन्तु हम तो वेदोक्त मन्त्रों के आधार पर विचार करते हैं।

परमात्मा ने इतने बड़े ब्रह्माण्ड को इस प्रकृति से बनाया है। अहा ! उस परमात्मा ने ब्रह्मात्व से इस संसार को उत्पन्न किया है। जैसे ब्रह्मा (यज्ञ का) नाना प्रकार से सुन्दर वेदी को रच देता है, वेदी को रच कर मन्त्रों के द्वारा सब कुछ सिद्ध करके देवों (भौतिक) तथा देवों (विद्वान होता है, उद्गाता, अध्वर्यु आदि) की स्थापना करके मानो यज्ञ वेदी को उत्पन्न कर देता है। अरे ! अब हमारे समक्ष वेदी के दो रूप उपस्थित हो जाते हैं एक भौतिक वेदी, दूसरी आध्यात्मिक वेदी। देखो भौतिक वेदी हमको आध्यात्मिक यज्ञ में पहुँचा देती है।

देखो हमारे अन्तःकरण में भी यज्ञशाला विराजमान है। उसमें मानो आत्मा आहुति देने वाला है। आत्मा सामग्री देने वाला है और मुनिवरो ! परमात्मा ब्रह्मा बन करके आत्मा को प्रेरणा देकर के और ऊँचे पथ पर चला रहा हैं और इसी प्रकार से संसार को भी चला रहा है।

देव मुनि नारद ने कहा कि प्रश्न तो यह था कि जो परमात्मा इस संसार में ओत-प्रोत है, लोक-लोकान्तरों को उत्पन्न कर रहा है। जिसकी सृष्टि का कोई अन्त नहीं पाता, इस पर यदि यह परमात्मा का अंश है तो परमात्मा के बनाये अनुकूल संसार को, अनन्त ब्रह्माण्ड को क्यों नहीं जान पाता? मुनिवरो ! देखो यह पृथ्वी-मंडल है, पृथ्वी-मंडल के ऊपर बुध मण्डल है, बुध मडल के ऊपर मंगल है, मंगल से ऊपर अनेक चक्षणि आदि लोक हैं। इस विशाल ब्रह्माण्ड में नाना सूर्य मण्डल हैं, नाना चन्द्र-मंडल, अगस्त मुनि-मण्डल वशिष्ठ मुनि-मण्डल, आरुणी-मण्डल और नाना मण्डल ध्रुव लोक, बृहस्पति लोक, अचंग लोक, मचंग लोक, भूः भुवः और स्वः आदि लोक लोकान्तर परमात्मा के बनाये हुए हैं। अहा ! देखो, यह परमात्मा की कैसी मनोहरता है? यदि यह आत्मा परमात्मा का ही अंश है तो यह क्यों नहीं इस परमात्मा की बनाई सृष्टि का अन्त पा लेता? इस पर आत्मा को परमात्मा का

अंश मानने वाले यह समाधान देते हैं कि यह आत्मा जब परमात्मा का दर्शन करके परमात्मा बन जाता है तब वह इन सबका प्रत्यक्ष कर ही लेता है।

उस दार्शनिक महर्षियों के समाज में पारा ऋषि ने कहा कि यह आत्मा किसके दर्शन करता है? उस परमात्मा के दर्शन करता है। उसके दर्शन से आत्मा ब्रह्म तो अवश्य बन जाता है। यह सत्य तो है कि परब्रह्म को पाकर ब्रह्म बन जाता है। इसमें कोई संकोच नहीं। यह एक विचारणीय विषय है। देखो, जब मानव की स्मरण शक्ति ऊँची होती है, योगी बन कर आत्मदर्शन करके परमात्मा के दर्शन की स्थिति में पहुँच जाता है। परन्तु वह ब्रह्म पद पर पहुँची आत्मा परब्रह्म कदापि नहीं बन पाती, कदापि नहीं बनेगी। महान् दार्शनिक महर्षि अटुल मुनि, महर्षि उद्यालक मुनि, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि, अष्टावक्र आचार्य आदियों का यही अटल निश्चय है।

एक बार राजर्षि जनक महाराज ने भी आचार्य अष्टावक्र से याज्ञवल्क्य के वाक्यों का प्रमाण देते हुए यही प्रश्न किया था। मुनिवरो ! उस समय आचार्य अष्टावक्र ने यही कहा था कि **आत्मा परब्रह्म का साक्षात्कार करके ब्रह्म तो बन जाता है परन्तु परब्रह्म कदापि नहीं बनता।** याज्ञवल्क्य महाराज के उपदेश को आपने ठीक-ठीक समझा नहीं। महर्षि याज्ञवल्क्य ने तो कहा था कि प्रभु ने संसार को रचा है। यह संसार गणों में विभक्त है। इस संसार से वह गणनीय है। वह हमारा स्वामी है। हम उसके आश्रित हैं। उसी ने संसार को उत्पन्न किया है। उसको पाकर के आत्मा ब्रह्म बन जाता है, परन्तु परब्रह्म कदापि नहीं बनता।

बेटा ! यह एक आचार्य का आदेश नहीं, यह तो सब आचार्यों का आदेश है। बेटा, हमने अपने गुरु ब्रह्मा जी से कहा था कि महाराज ! हम यह जानना चाहते हैं कि यह ब्रह्म क्या पदार्थ है। क्योंकि आपने तो व्याकरणादि सहित चारों वेदों का स्वाध्याय किया है। आप एक-एक अक्षर से कई-कई प्रकार से अनुवाद करने वाले हैं। मुनिवरो ! उस

समय **गुरु ब्रह्मा जी ने कहा कि जैसे माता का और पुत्र का, पिता का और पुत्र का सम्बन्ध होता है वैसे ही आत्मा-परमात्मा का सम्बन्ध माना गया है।**

हे मुनिवरो ! एक समय हमारे महानन्द जी ने कहा कि **परमात्मा ब्रह्मा की शक्ति बनकर संसार को उत्पन्न करता है।** उनके ऐसे प्रश्नों का समाधान पूर्व समय में कर चुके हैं। परन्तु महानन्द जी के अधिक आग्रह के कारण इसका समाधान पुनः इस प्रकार से उपस्थित करते हैं।

परमात्मा को ही ब्रह्मा कहते हैं। परमात्मा स्वयं ही सृष्टि की स्थापना करता है। प्रश्न होता है कि कैसे बनाता है। किस पदार्थ से बनाता है? मुनिवरो ! देखो जैसे यज्ञ का ब्रह्मा यज्ञशाला में विराजमान होकर अपने स्वयं के शरीर से भिन्न द्रव्यों का आयोजन यज्ञ के लिए करता है और कराता है, यज्ञ वेदी को रचाता है तो यजमान उससे भिन्न होते हैं। इसी प्रकार से मूल प्रकृति को महत्त्व प्रदान करके सृष्टि उत्पन्न करता है। यह प्रकृति प्रलय काल में अव्यक्त रूप (शून्य रूप) थी। उसी सूक्ष्म प्रकृति को महत्त्व रूप में परिवर्तित करके, इसमें प्राण प्रदान करके, इसमें क्रिया पैदा करके तन्मात्राओं को पैदा करता है। तन्मात्राओं से पंचभूत, बेटा ! पंचभूतों से यह सँसार बन गया है। बेटा ! देखो, उस महान परमात्मा ने उस सूक्ष्म और महान् प्रकृति से संसार को बनाया। हमारे शरीरों को बनाया। इसमें अहंकार है, नाना प्रकार के विषय सूक्ष्म रूप से हैं।

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि परमात्मा ने यह सब किसके लिए बनाया? शून्य (अव्यक्त) प्रकृति को इस प्रकार चेतन में लाने की परमात्मा को क्यों आवश्यकता पड़ी? क्योंकि परमात्मा तो पूर्ण है। निर्द्वन्द है। परमात्मा को स्वयं संसार में आने की क्या आवश्यकता है? और संसार को क्यों बनाने की आवश्यकता है? मुनिवरो ! जैसे माता अपनी लोरियों में बालक को जीवन दान करती है, उसी प्रकार हम आत्माओं के लिए परमात्मा ने इस सृष्टि को उत्पन्न किया है। प्रलय

के समय यह सारी सृष्टि और सारे जीव उस परमात्मा के गर्भ में हो जाते हैं।

महानन्द जी ने अनेक बार कहा कि जैसे समुद्र का जल ही नदी, नद, तालाब और सरोवरों आदि में पड़ कर भिन्न-भिन्न आकार एवं रूप धारण कर लेता है तथा उन सब जलाशयों में एक सूर्य का ही अनेक रूप में प्रतिबिम्ब पड़ता है। ऐसे ही परमात्मा के ही ये सब रूप एवं अंश हैं। पर महानन्द जी आप निराकार परमात्मा के लिए साकार पदार्थों का, बने हुए पदार्थों का (परिणामी पदार्थों का) कैसे उदाहरण देते हैं? अरे बेटा ! परमात्मा तो निराकार है (अपरिणामी) है। किसी निराकार का और अपरिणामी पदार्थ की युक्ति देते तो सुन्दर होता। बुद्धिसंगत होता। परमात्मा सदा अपरिवर्तनशील है। उसके लिए परिवर्तनशील का उदाहरण कैसा? और क्यों? ये उदाहरण तो परमात्मा पर कदापि घटते ही नहीं।

हे मुनिवरो ! परमात्मा को प्रत्यक्ष और साक्षात्कार करने से पहले अपनी आत्मा को अच्छी प्रकार से समझो, जानो और अपनी आत्मा में उस परब्रह्म को पा लो। तब यह आत्मा भी परब्रह्म को पाकर ब्रह्म बन जायेगा, पर परब्रह्म कदापि नहीं बनेगा। यह अद्वितीय परब्रह्म कभी नहीं बनेगा। नहीं तो, यह आत्मा अपने कर्मों के चक्रों में फिरता ही रहेगा।

मुनिवरो ! हमारे व्याख्यान का आरम्भ तो ''परमात्मा ने सृष्टि को क्यों उत्पन्न किया? किसके लिए किया? क्यों ऐसा दुःख भरा संसार परमात्मा ने उत्पन्न किया? महानन्द जी ने एक समय कहा था कि - ''यह तो परमात्मा खेल खेल रहा है। अच्छा मुनिवरो ! जरा विचार कीजिए, कि खेल कौन खेला करता है। खेल वही खेला करता है, जो अज्ञानी होता है। मुनिवरो ! देखो, जैसे एक माता का बहुत छोटा सा पुत्र है, वह पुत्र तभी तक नाना प्रकार के खेल खेलता है जब तक बाल्यावस्था रहेगी, अज्ञानता रहेगी, और जब उसे वेदों का ज्ञान हो जायेगा, महान् ज्ञान हो जायेगा, वह परमपद की इच्छा में

मग्न हो जायेगा, वह महान् बन जायेगा। इस प्रकार से तो तुम्हारे कथनानुसार परमात्मा भी अज्ञानी हो जायेगा। जबकि परमात्मा तो ज्ञानियों का भी ज्ञानी है। परमात्मा हर प्रकार से पूर्ण है। खेल तो अपूर्ण खेला करता है।

देखो, महान् ! मुनिवरो ! हममें अपूर्णता है। हम में सीमितता है। इस काल कोठरी में, इस अजिर में, इस शरीर में आए हुए हैं। हमारा ज्ञान सीमित है, हमारा विज्ञान सीमित है, हमारे जो कार्य हैं वे भी सीमित हैं। हमारे नियम भी सीमित है अर्थात हमारे कार्य सीमित हैं।

अहा ! परमात्मा को देखो वह पूर्ण है, उसकी विद्या असीमित है। वह महान् बुद्धिमान है, वह हर प्रकार से पूर्ण, विद्या में पूर्ण, सृष्टि रचना में पूर्ण, हमारे कर्मों के फल देने में पूर्ण अर्थात वह परमात्मा हर प्रकार से पूर्ण है। इसलिए परमात्मा कदापि खेल नहीं बनाता। इसलिए हमको मान लेना चाहिए कि परमात्मा हमारे लिए सृष्टि को उत्पन्न करता है। और हम उसमें कर्म करने के लिए उद्यत हो रहे हैं।

महानन्द जी बार-बार कहा करते हैं कि आजकल के सभी आचार्य मानते हैं कि ''आत्मा और परमात्मा एक ही पदार्थ हैं।'' (इसके विपरीत) आप इसको ऐसा अर्थात् भिन्न-भिन्न मान रहे हैं। पर मुनिवरो ! यह हमारा ही व्याख्यान नहीं, यह हमारा ही आदेश नहीं। हम तो इस काल को, इस समय को, इस महान् समय को बहुत समय से देखते चले आ रहे हैं। अहा ! हमने तो यह विचार दार्शनिकों से पाया है। मुनिवरों आदि दार्शनिकों का यही सिद्धान्त है। यही मानते चले आए हैं। बेटा ! जो इससे भिन्न मानेगा वह (परस्पर) एक दूसरे को दोषी बनाएगा।

पूज्य महानन्द जी — गुरु जी ! आधुनिक काल में ऐसा मानते हैं कि आत्मा परमात्मा एक ही पदार्थ है। आपने तो इनको भिन्नता दे दी है। भगवन् ! एक नहीं आधुनिक काल के तो बहुत से (आचार्य) कुछ ऐसा ही कहते हैं। (केवल) आधुनिक काल के ही नहीं (अपितु)

महर्षि व्यास मुनि जी ने भी ऐसा ही कहा है कि ''यह आत्मा ही परमात्मा बन जाता है।'' (अर्थात) जब यह आत्मा परिश्रम करके अपने को पा लेता है तो (इसका) अपने को पाना ही ब्रह्म को पाना है। यह अपने आप (स्वतः) ब्रह्म है। (इसके अतिरिक्त) और कोई ब्रह्म नहीं है। और न कोई कुछ है।

तो महानन्द जी ! यह महर्षि व्यास मुनि ने कहा है क्या?

पूज्य महानन्द जी — हां ! भगवन् ! ऐसा ही कहते हैं।

अरे ! कहते हैं या तुम मान रहे हो ऐसा? कौन कहता है? तुम्हीं तो उच्चारण कर रहे हो या और कोई कह रहा है?

पूज्य महानन्द जी — नहीं भगवन् ! आधुनिक काल के ब्रह्मवेत्ता और ब्रह्मनिष्ठ ऐसा माना करते हैं।

तो महानन्द जी ! इससे तो हमें ऐसा प्रतीत हो रहा है कि जैसे तुम भी ब्रह्मनिष्ठ बन गए हो।

पूज्य महानन्द जी — नहीं, भगवन् ! हम तो ब्रह्मनिष्ठ नहीं बन रहे हैं। हमारा तो केवल आपसे एक प्रश्न है।

अच्छा, महानन्द जी ! इसका तो संक्षेप में उत्तर यह है कि महर्षि व्यास मुनि ने ऐसा नहीं माना। महर्षि व्यास मुनि ने तो ऐसा माना है और वेदान्त में अपनी बहुत कुछ बुद्धि के द्वारा जाना और विज्ञान के द्वारा भी उन्होंने जाना और उन्होंने आध्यात्मिक विज्ञान पर बल दिया। तो महर्षि व्यास ने ऐसा कहा है बेटा ! जो हमने महर्षि व्यास के वचनों को पाया और व्यास मुनि से पाया और उन्होंने तो ऐसा कहा है कि यह आत्मा अपने को जब पा लेता है तो अपने को पाकर के परब्रह्म को पा लेता है और परब्रह्म को पाकर के यह आत्मा ब्रह्म बन जाता है। बेटा ! तो हम तुम्हारे वाक्यों को सत्य मानें या व्यास मुनि के?

पूज्य महानन्द जी — गुरु जी ! जिसकी आप कल भी व्याख्या

कर रहे थे कि महाराजा कृष्ण ने भी अर्जुन को बार-बार ऐसा कहा है कि तुम मुझे पाओ और मेरे अर्पण कर दो और मुझे जो पा लेता है वह मेरे में ही रमण कर जाता है। तो यह कैसे? और आपने कल भी इसकी व्याख्या की और व्यास मुनि के वाक्यों को तो ऐसा कहते हैं तो महाराजा कृष्ण के वाक्यों को क्या कहेंगे?

महानन्द जी ! बेटा ! तुम इस वार्ता को जान तो पाते नहीं, वैसे ही प्रश्न कर देते हो। महाराजा कृष्ण ने अर्जुन से कई स्थानों में ऐसा कहा है कि हे अर्जुन ! अपने जन्म-जन्मान्तरों की बहुत सी वार्ताओं को मैं जानता हूँ और तू नहीं जानता। बेटा ! यह तो तुम जान गए होगे। हमारे कथनानुसार भी और हमारी स्थिति को जानकर के भी तुम्हें यह जानना ही होगा कि ये जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार मानव को कहाँ तक ले जाते हैं। तो महानन्द जी ! इससे हमें ज्ञान होगा कि महाराजा कृष्ण ने केवल एक ही गान गाया जो हम कल उच्चारण कर रहे थे। गान तो हमने गाकर वर्णन नहीं किया पर उन्होंने यही गान गाया कि देखो मैं जानता हूँ और तू नहीं जानता, यह आत्मा अमर है, अजर अविनाशी है, विभु (स्थिर, सर्वत्र गतिशील) है। देखो ! **यह परमात्मा महान् है, यह न कदापि जन्मता है और न कदापि नष्ट होता है।** महान् ! देखो, यह भी है, तू मेरे अर्पण कर। तो मुनिवरो देखो, यह यहाँ गुरु शिष्य का भाव आ जाता है। जब गुरु को शिष्य का अज्ञान समाप्त करना होता है, अज्ञान नष्ट करना होता है तो ज्ञानी गुरु, अज्ञानी शिष्य से कहता है कि ''हे अज्ञानी ! तेरे में जो अज्ञानता है वह मुझे दे, उसे तू मुझे अर्पण कर दे और हर प्रकार से तू मुझे ही मान और जब तू मुझे मान जाएगा और अच्छी प्रकार जान जाएगा देखो, जब तू ज्ञानी (गुरु) को अच्छी प्रकार जानेगा तो उस समय ज्ञानियों के भी ज्ञानी (गुरु) उस पूर्ण ज्ञानी परमात्मा को पाकर के महान् ज्ञानी बन जायेगा।'' तो बेटा ! ऐसा उन्होंने (महाराजा कृष्ण ने) कहा है। तो हम क्या कहें? बेटा ! हम तुम्हारे वाक्यों को क्या कहें? हमारा यह आदेश है। हमने यह पाया है और यही सुना है। वह

तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर दिया है। बेटा ! आगे जो, जैसी तुम्हारी इच्छा हो वह मानते रहो इसमें हमारी कोई हानि नहीं है।

नास्तिकता से पतन

पूज्य महानन्द जी — गुरु जी ! इसमें हानि का तो कोई प्रश्न ही नहीं आता, भगवन् ! हम परमात्मा को न माने तो भी इसमें हमारी क्या हानि होती है ! हिं, हिं, हिं (हास्य)।

हाँ ! यह तो तुम्हारा वाक्य सत्य है। यदि तुम परमात्मा को न मानो तभी तुम्हारी क्या हानि है? बेटा ! इसमें तो बहुत बड़ी हानि हो जायेगी।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् क्या हानि हो जायेगी?

हानि यह हो जायेगी कि जो इतने बड़े ज्ञानी को नहीं मानता, जो इतने बड़े पूर्ण ज्ञानी को नहीं मानता, जिसने हमारे शरीर को बनाया, जिसने हमें नाना प्रकार के आहार करने के पदार्थ दिए, जिसने तत्त्व दिये हैं, आज यदि हम उस प्रभु का आदर नहीं करेंगे या उसको नहीं मानेंगे तो बेटा ! हमसा धूर्त्त संसार में कौन होगा? महानन्द जी ! तो इसलिए तुममें धूर्त्तता आ जायेगी और तुम अपने को खो बैठोगे। और तुम्हारा सभी ज्ञान समाप्त हो जायेगा।

पूज्य महानन्द जी — गुरु जी ! तो, यदि हम परमात्मा को मानेंगे तो हमारा ज्ञान सुरक्षित रहेगा। यदि परमात्मा को न मानेंगे तो हमारा ज्ञान समाप्त हो जायेगा? हिं, हिं, हिं...(हास्य)

"हाँ बेटा ! हमारा तो ऐसा ही निर्णय किया गया है।"

पूज्य महानन्द जी — "तो जो आप निर्णय कर दें क्या वही सत्य हो सकता है?"

प्रभु विश्वास से लाभ

अरे ! इसका यह अभिप्राय तो नहीं जो तुम उच्चारण कर रहे हो। हम जो उच्चारण में निर्णय दे देते हैं वह सत्यता है। भाई ! देखो,

परमात्मा को मानने से हमारी आत्मा में बल आता है। देखो, किसी बली को प्रसन्न करने से, किसी बली के गुण (गान से अपने जीवन में कार्य रूप में परिणित करने से) आ जाने से हममें बल आता है। किसी दुर्बल मनुष्य को या किसी हीन मानव को प्रसन्न करेंगे और उसके गुण अपने में धारण करोगे तो बेटा ! हममें दुर्बलता आएगी और जो ज्ञानी को, उसके ज्ञान को अपने में धारण करोगे तो हममें ज्ञान आता चला जाएगा। हम महान् से महान् बन सकते हैं। यह तो तुम मानते हो कि जो जिसके निकट आ जाता है उसके परमाणु उसमें आ जाते है। उसके जितने परमाणु आते जायेंगे उसकी उन जैसी और उतनी प्रकृति भी बनती चली जाएगी।

बेटा ! देखो, इसलिए जब यह आत्मा, परमात्मा के निकट जाने वाला बन जाता है, जितने निकट जाता रहता है, उतना परमात्मा की परिधि में घूम-घूम करके कार्य करने लगता है, जितना उसके निकट जाता है, उतना ही प्रभु से (अपने मस्तिष्क परमाणुओं में प्रेरणा प्राप्त करके) हर प्रकार से ज्ञानी बन जाता है। यह तो तुम मानते हो ! बेटा ! और यदि इसको भी न मानते तो तुम्हें यह मानना ही पड़ेगा कि परमात्मा ऐसा पदार्थ है, ऐसा महान है, ऐसा देवों का देव है जो प्रभु हमें सभी कुछ पदार्थ देकर के हमारे जीवन को चला रहा है। यदि हम उसको न मानें तो बेटा ! हमारी हानि ही हानि है। हिं, हिं, हिं (हास्य)

पूज्य महानन्द जी — गुरु जी ! आपकी तो वही बात है कि जो हम कहते हैं, वही सत्य है।

अरे ! फिर वही बात। अरे ! यह तो हम नहीं कह रहे भाई। हमने जो पाया, आचार्यों से जो सुना और जो वेदों में खोज कर पाया वह तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर रहे हैं और जो कुछ अनुभव किया है (वह भी)।

पूज्य महानन्द जी — तो गुरु जी किसी का अनुभव आपसे उच्च भी तो हो सकता है?

हाँ हाँ, अवश्य हो सकता है। हमसे तो बेटा ! तुम्हारा अनुभव भी ऊँचा है। इसमें क्या संकोच की बात है। हमारे से तो सभी का अनुभव उच्च है। हमने तो जो खोजा है वह तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर दिया। अब यह तुम्हारी महत्ता है, यह तुम्हारा विचार है इसे मानो या न मानो। यह तो तुम्हारी बुद्धि की अनुकूलता है। जो तुम्हारी बुद्धि स्वीकार कर ले मान लो इसमें किसी की कोई हानि नहीं है। **सत्य के उच्चारण करने में और सत्य को मानने में किसी की कोई हानि होती ही नहीं।**

पूज्य महानन्द जी — चलो भगवन्।

तो मुनिवरो ! अभी-अभी हम महानन्द जी के बहुत से प्रश्नों का उत्तर दे रहे थे। अभी-अभी हमारा व्याख्यान चल रहा था कि परमात्मा को न मानने से हमारी हानि ही हानि है और परमात्मा को मानने से हम में बल आता है, विद्या आती है हम श्रद्धालु बन जाते हैं। हम उस परमात्मा की गोद में चले जाते हैं जो परमात्मा हमारा हर प्रकार से लालन-पालन कर रहा है।

तो मुनिवरो ! परमात्मा ने इस संसार को हमारे लिए ही बनाया है। हम इस (संसार) में अपना कर्म करने के लिए उदित हुए (जन्मे) हैं।

सृष्टि के आरम्भ होने से पूर्व यह आत्मा परमात्मा से कहता है कि हे परमात्मन ! हमारे लिए सृष्टि का आरम्भ करो, हम इस संसार में आना चाहते हैं। (हमें) पूर्व की भाँति उत्पन्न करो। हमारे जो शेष कर्म हैं। हम उनको किसी न किसी प्रकार पूर्ण करें।

तो मुनिवरो ! उस समय परमात्मा हमारे लिए सृष्टि का प्रारम्भ कर देता है।

दिनांक : 1 अप्रैल, सन् 1962

स्थान : लोधी रोड, नई दिल्ली

ॐ

The State of the soul after death

O Sages ! I was just reciting a few Vedic Hymns in the Jata accent which were highly pleasing to the soul. The hymns were so beautiful and fascinating that it appeared as if the tongue, heart, mind and other organs were all getting united in a melodious repose.

O Son ! Times have changed now. There was a time when even a lion acted like a tame animal when the Vedic hymns were recited before it from the core of the heart. Once it actually so happened. Long ago I saw a lion sitting at the feet of my revered Gurudeva in his Ashrama. This could be possible on account of the sacred environment of the Ashrama. The atmosphere of the Ashrama was, as if, always vibrating with the chanting of the Vedic Mantras, and emitting the fragrance of purity. Anybody whether a beast, a bird or a man, who came in contact of the Ashrama, was at once overwhelmed with the purity of the place and his violent instincts left him. The Vedic knowledge is that priceless treasure that teaches a man to be non violent and elevates him. But the world of today knows only to speak highly of the Vedas and is not ready to follow their teachings. But the utterings of the Vedic hymns are only effective when they are brought into practice. If we are not ready to do that, there is no use of reciting them.

O Sages! Today, I intend to give a serious talk on the subject matter of the soul. The soul dwells in the

body with its family. Its family consists of the intellect, the mind, the five organs of perception, the five organs of action and the five life-winds. We have to think over the different functions of these family members. A man has the capacity of memorizing and thinking in his mind, the capacity of working in the organs of action, the capacity of acquiring knowledge in his organs of perception and the capacity of rising up with the help of the Vaishwanara Agni in his life-winds. And above all these, is his intellect with its capacity of reasoning which controls all of them. The place near the soul is called the heart. Any matter which appears in the intellect is transferred to the heart. Heart (Chit mandai) is the place where the impressions of all the past lives of a man are recorded. Then there is the soul which has to take birth again and again on account of these members of its family.

O Sages ! Had the soul not been attached to these family-members there would have been no necessity of its coming to this world again and again. Just as a business man goes out from his home to far off countries for the purpose of trade, leaving behind his dear wife and children, but he remains always anxious to return home to see his family members, and hence he has to come to his house without fail, similarly the soul which has its abode in the heart is compelled to come back to the world in the frame of a body.

The elements that accompany the soul after death.

Now the question arises what are those materials which accompany the soul when it departs from the body. Our philosophers have discussed this matter and said

that when the soul leaves the body it is accompanied with the subtle body which is composed of seventeen elements in their subtle forms. These seventeen elements consist of the five organs of action, the five organs of perception, the five life-winds, the mind and the intellect. Further the thoughts and feelings which predominate the mind of a man at the time of his death continue to influence the soul even after death and after death the soul enjoys the company of other similar souls in subtle bodies in the ether. There are different categories of souls which exist in the ether. They are (1) those having Sattwaguna i.e., the quality of goodness and purity, (2) those having Rajasguna i.e., the quality of being highly active and (3) those having the Tamasguna i.e. the quality of darkness and ignorance.

The state of soul after death

O Sages ! My dear Mahanandji once stated that after death the soul roams in the ether for a period of thirteen days. I would have accepted his words but evidences tell otherwise. There are instances in which souls took rebirth soon after death, while on the other hand there are other instances also in which souls have continued to roam in the ether for hundreds of years, One thing however, is certain. A soul has to take birth after death according to his deeds performed in the life-time. The third category of souls described above viz; the souls having the Tamasguna or the quality of darkness and ignorance, on leaving this world, roam for a period of thirteen days in company of other souls of the same category and then they must come back and take birth in this world, while the souls of the first category viz. The soul having the Sattwaguna, if they so

desire, may come back to this world after one month of the death or may enjoy the company of liberated souls for even hundreds & thousands of years in the ether, just like the soul of my dear Mahanandji.

Engagement of the soul after death

Now, the other question is how is the soul engaged while it is in ether for hundreds of years? The answer to this question is that the soul is never without engagement. A soul having the Tamasguna roams about for thirteen days in a certain type of air called Shringaketu and is engaged with other souls having the Tamasguna, and then leaving aside the past memories takes rebirth. A soul having the Sattwaguna is also not without engagement. It roams about in three types of airs named Indra, Mricha and Saumbhau and rules over the five elements of nature which exist there in subtle forms, and in this way is engaged with the other souls having the Sattwaguna roaming there, and then according to his deeds takes rebirth. A question arises in this connection whether the soul is gross or subtle? When it rules over nature, should it be supposed that the soul is gross? Because one ruling over Nature should be gross. But this is not correct. In fact Nature too is as subtle as the soul, and just as in this world a gross body is ruled over by another gross body, so there in the ether a subtle body is ruled over by another subtle body.

Pujyapad Gurudev

Yogic Wisdom of the Ancient Rishies.

Parvachan Dated 27th September, 1964

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	50.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	25.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	25.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	25.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	100.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	110.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	40.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	25.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	20.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	25.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	30.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला बागपत, (उ.प्र.)। दूरभाष : 01234 240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। दूरभाष : 0131 2606414
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष : 011-26498737
5. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-4165802
6. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) दूरभाष : 9410452076
7. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) दूरभाष : 09412139333
8. श्री विवेक त्यागी, 16ए अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष : 0122-2316196
9. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-2642052
10. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110ए मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) दूरभाष : 9899228860, 9871367937
11. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। दूरभाष : 9910589486
12. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) दूरभाष : 9313530505
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-23282088
14. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
15. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष : 011-23977216
16. जवाहर बुक डिपो, बुढ़ाना गेट, आर्य समाज मेरठ शहर (उ.प्र.)।

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

वैदिक अनुसन्धान समिति के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते पर व निम्न पते पर डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं।

डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
ए-59, पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017
दूरभाष : 011-26498737

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : www.contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हे मानव ! जब तक तू अपने को नहीं जानेगा और जब तक अपने महत्त्व और मानवता को भली प्रकार नहीं समझेगा तब तक तू मानवता की कोई जानकारी नहीं कर सकता, क्योंकि मानव जीवन मनोहर होता है और मनोहर जीवन बनाने के लिए मानव को सुन्दर योजना बनाने की आवश्यकता है और जो मानव सुन्दर योजना नहीं बनाता उसका जीवन व्यर्थ हो जाता है। इसीलिए मानव को अपने धर्म पर दृढ़ रहना चाहिए और मर्यादा में चलना चाहिए। आपत्ति आने पर भी उसे सहना चाहिए, सहन करते रहे तो उसके उज्जवल होने का समय अवश्य आ जायेगा। आज मानव स्वार्थ के वशीभूत हो दूसरों की निन्दा में लगा रहता है। दूसरों की त्रुटियों को ग्रहण करता है। अरे मानव ! आज तू दूसरों की त्रुटियों को ग्रहण क्यों कर रहा है? अरे ! इनकी अच्छाईयों को ग्रहण कर, तुम्हारें द्वारा अच्छाईयों का ढेर लग जायेगा। तुम अच्छाईयों के पुतले बन जाओगे।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 494
नवम्बर 2013

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-11-2013
Published on 5th day of the same month